## संस्कृति के नाम पर

# बंधे पावों का सफर

जुही जैन

भारत में औरत को बुर्के-घूंघट में रखने की प्रथा हो या अफ्रीका में महिला-सुन्नत की प्रथा, या फिर चीन में औरत के पैर बांधने का रिवाज, यह सभी संस्कृति और रिवाज़ के नाम पर औरत को दबा कर रखने के तरीके हैं। गले में आधा मन जेवर या नाक में भारी नथनी भी इन्हीं रिवाज़ों में शामिल है। यह सभी कभी सुंदरता के नाम पर, और कभी सुरक्षा के नाम से या कभी धर्म की आड़ में हम पर थोपे जाते हैं। इस तरह यह परंपरा बन जाती है और संस्कृति के नाम पर पीढ़ी दर पीढ़ी चलती जाती है।

चीन के कुछ पिछड़े इलाकों में आज भी औरतों के पैर बांधने की प्रथा जारी है। इस रिवाज़ के बारे में अक्सर पढ़ा तो था, पर पहली बार किसी की आत्मबीती उसकी मुंह-जुबानी सुनकर पता चला कि यह भी हिंसा का ही एक रूप है। मेरी एक चीनी सहेली की अस्सी साल की दादी मां हैं, पिंग ली। जो कुछ उन्होंने बताया वह इस प्रकार है।

### पतले और सुंदर पैरों के लिए

मेरा जन्म हसाई के एक पुरातन पंथी परिवार में हुआ था। सात साल की होने पर हमारे परिवार में उनके पैर बांधने की शुरुआत हुई। मां ने शुक्ल पक्ष में एक शगुनी दिन का मुहूर्त निकलवाया। मुझे पता चला तो डर के मारे पड़ोसी के घर जाकर छुप गई। पर मां मुझे जबरदस्ती वापस घसीट लाई। मुझे एक कमरे में बिठा दिया गया। एक

पेटी से छोटे जूते, पट्टा, छुरी, सुई, धागा निकालकर रखा गया। मेरे पैरों को गरम पानी से धोकर नाखून काट दिए गए। फिर शंख-जीरा लगाकर मां ने पट्टा कस के बांधना शुरू किया। वह पट्टा बांधती जाती और पैर की उंगलियों को अंदर की तरफ खींचती जाती थी। दोनों पैर बांधने के बाद, फिर जूते पहनाए गए। फिर मुझे चलने के लिए कहा गया। चलने की कोशिश में मैं दर्द से चीख पड़ी।

मां मुझे जूते उतारने नहीं देती थी। जबरदस्ती चलवाती थी। और मैं मौका पाते ही पट्टी ढीली

कर देती। इस पर खूब पिटाई होती। हर तीन-चार दिन में मां पट्टी खोलकर पैरों की सफाई करती। दस महीने बाद मेरी सारी उंगलियां तलवे से चिपक गईं। मांस खाने पर मेरे पैर सूज जाते और उनसे मवाद निकलती। मां कहती, जैसे-जैसे मांस बहकर निकलता जाएगा वैसे-वैसे पैर पतले और सुंदर हो जाएंगे। पर मैं बहुत दुखी थी। गलती से पैर दब जाता तो खून का फव्वारा निकल पड़ता।

हर पंद्रह दिन में मैं नए जूते पहनती। हर नया जूता एक इंच छोटा होता जाता। मुझे बैठे रहना ज्यादा भाता था, पर मां मुझे मार-मारकर चलने पर मजबूर कर देती। इस तरह दस जोड़ी जूते बदलने के बाद मेरे पैर चार इंच के हो गए।

गर्मियों में सभी मुझे पास बैठने नहीं देते थे। मवाद निकलने से पैरों से बदबू आती थी। सर्दियों में पैर जम जाते थे। अगर सिगड़ी के पास उन्हें तापती तो जलन होती। खुजली होती तो खुजा नहीं सकती थी। चमड़ी कच्ची थी, इसलिए खून आ जाता था। खैर, तीस साल निकले और मेरे पैर तीन इंच के हो गए। पर मुझे अपने पैरों से चिढ़ हो गई थी।

## अच्छे पति के लिए

फिर मेरी शादी तय हुई। ससुराल वालों ने पहले मेरे पैर देखे। मां कहती थी छोटा पैर होगा तो अच्छा पति मिलेगा। तू सुखी रहेगी। पर सिर्फ़ मैं जानती थी कि मुझे कितनी तकलीफ होती है। छोटे-छोटे कदम उठाकर चलने पड़ते हैं। शरीर बेडौल लगता है। दो कदम चलने में भी जान जाती है। पर चीनी पुरुष मानते हैं कि पैर बांधने से योनि अधिक रसप्रद होती है। चेहरा ज्यादा खिलता है। कभी मैं सोचती मैं गरीब खेतिहर लड़की होती तो ठीक रहता। खेत में काम करती पर मेरे पैर नहीं बंधते।

## विरोध की शुरुआत

चीन में मंचु साम्राज्य के समय इस अमानवीय प्रथा का विरोध हुआ था। पग बंधन विरोधी सोसाइटी की स्थापना भी हुई थी। इस सोसाइटी ने काफी प्रदर्शन किए और लोगों को बताया कि खुले पैर वाली औरतें भी सुंदर और कार्यकुशल होती हैं।

कुछ पुरुषों ने भी साथ दिया। पर इसलिए क्योंकि बंधे पैर वाली औरतें घर का काम नहीं कर पाती हैं। फिर बेकार दवाई का खर्चा। ऐसी औरतें देश के विकास के लिए बेकार हैं। चाहे पुरुषों ने अपने स्वार्थ के लिए ही विरोध किया पर बात लोगों की समझ में आने लगी। और आखिरकार 1902 में घोषणा की गई कि बंधे पैर वाली औरतों को सरकारी स्कूलों में दाखिला नहीं मिलेगा। तब कहीं जाकर यह रिवाज़ कम हुआ।

## जीने का संघर्ष

आज यह रिवाज़ ज्यादा प्रचलित तो नहीं है। सरकार के आंकड़ों से यह बिल्कुल बंद है। पर अभी भी पिछड़े इलाकों में इसका चलन है। पर साथ ही अब जागरूकता बढ़ गई है। औरतें खुद इस व्यवहार के खिलाफ़ बोलने लगी हैं। पर यह लड़ाई अभी खत्म नहीं हुई है। यह उस समय तक जारी रहेगी जब तक एक भी औरत के पैर सुंदर बनाने के लिए बांधे जाएंगे। यह कोई सत्ता के लिए होने वाला संघर्ष नहीं है। यह तो आधी मानव जाति के जीने के अधिकार का संघर्ष है। □